शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh
A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly International E-Journal
ISSN-2993-4648 Year/Volume: 04, Issue: 14 | April - June 2026 | Impact Factor: 4.5 Page –28-31

रणेन्द्र के उपन्यास 'गायब होता देश' में अभिव्यक्त आदिवासी जीवन-संघर्ष

जय कुमार तिवारी
शोधार्थी, हिंदी विभाग
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय अमरकंटक म.प्र.
मो. 9691278517 ईमेल- tiwari501jay@gmail.com

Received– 28 may - 2026
Accepted-30 May - 2026
Published– 30June 2026
Corresponding Author-
जय कुमार तिवारी- शोधार्थी, हिंदी विभाग
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय अमरकंटक म.प्र.
मो. 9691278517 ईमेल- tiwari501jay@gmail.com
DOI-https://doi.org/10.67275/SU.2026.041407
Funding Policy-
'Shodh Utkarsh' is an independent journal and receives no financial support or grant from any public, commercial, or not-for-profit organization.
वित्त पोषण नीति-
'शोध उत्कर्ष' एक स्वतंत्र पत्रिका है। इसे किसी भी सार्वजनिक, वाणिज्यिक या गैर-लाभकारी संगठन से कोई वित्तीय सहायता, अनुदान या फंडिंग प्राप्त नहीं होती है।
Copyright Notice -
© 2026 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC-BY 4.0).
कॉपीराइट सूचना-
© २०२६ लेखक। यह कार्य क्रिएटिव कॉमन्स अ Attribution 4.0 इंटरनेशनल लाइसेंस (CC-BY 4.0) के अंतर्गत लाइसेंस प्राप्त है।

OPEN ACCESS
Shodh Utkarsh
CC-BY 4.0

शोध सार- रणेन्द्र एक उभरते हुए उपन्यासकार हैं, इन्होने अपने उपन्यासों के माध्यम से आदिवासी जीवन के विविध पक्षों को प्रस्तुत किया है। आदिवासी समाज से जुड़कर उनके दर्शन, जीवन-संघर्ष तथा समस्याओं को पाठकों तक पहुंचाते हैं। रणेन्द्र का उपन्यास गायब होता देश में झारखण्ड की मुण्डा जनजाति के जीवन दर्शन तथा जीवन संघर्षों का चित्रण है। इस जनजातीय समाज की मूल समस्या विस्थापन है। विस्थापन के बाद किसी भी समाज के लिए नए जगह में पुनः ढलना कठिन होता है। उनकी पूरी संस्कृति के विलुप्त होने का खतरा रहता है। भूमण्डलीकरण के नाम पर आदिवासियों की संस्कृति तथा समाज की अंत किया जा रहा है। 'गायब होता देश' शीर्षक भी आदिवासियों की इस समस्या को चरितार्थ करती है। आदिवासियों के विरोध को शासन के प्रत्येक स्तर पर दबा दिया जाता है, उनको उनकी ही संपत्ति जल, जंगल और जमीन से बेदखल कर दिया जाता है। आदिम समाज की यह तमाम समस्या रणेंद्र के इस उपन्यास मे चित्रित है।

बीज शब्द- मूलनिवासी, घरवापसी, भूमण्डलीकरण, यथार्थ, विस्थापन, बेरोजगारी, जादुई यथार्थवाद, नवसाम्राज्यवादी लूट।

मूल आलेख- आदिवासी साहित्य तथा उनका जीवन दर्शन आज विमर्श के केंद्र में है। रणेन्द्र, जो हिंदी जगत के एक उभरते हुए लेखक हैं। इनकी अधिकांश रचनाएं आदिवासी पृष्ठभूमि पर ही टिकी हुई होती हैं। रणेन्द्र के प्रथम दो उपन्यास 'ग्लोबल गांव के देवता' तथा 'गायब होता देश' आदिवासी साहित्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। किसी भी समाज के पास जीने का अपना एक दर्शन होता है। इसी तरह आदिवासी समुदाय के पास भी धरती और सृष्टि को देखने का अपना-अपना नजरिया है। आदिवासी समुदाय के पुरखों ने जीने का एक तरीका खोजा था जो जल, जंगल और जमीन से जुड़ा हुआ है। आदिवासी समाज का दर्शन नैसर्गिक आवश्यकताओं पर आधारित है जिसने लोभ, छल, आदि का लेश मात्र भी नहीं है। इनका दर्शन प्रकृति से जुड़ा हुआ है तथा सजीवता और सहजीविता के सिद्धांत को स्वीकार करता है। "आदिवासी समुदाय आदिम एवं मूलनिवासी समाज का वह हिस्सा है जो अभी भी मुख्य समाज से अलग-थलग प्रमुख रूप से प्रकृति पर आधारित जीवन जीता आ रहा है और प्राचीनता एवं नैसर्गिकता के सन्दर्भ में आदिम सरोकारों का कमोबेश संरक्षण किए हुए हैं।"[1] आदिवासियों के लिए प्रचलित दो नामों 'आदिम' जो आस्ट्रेलिया के मूलनिवासियों को कहा जाता है तथा 'मूलनिवासी' जो शेष दुनिया के लिए प्रयोग में लाया जाता है में भी अंतर है। 'आदिम' शब्द में मौलिकता है तथा 'मूलनिवासी' में उसी भू-भाग में जीते रहने के भाव का आभास होता है।

आज आदिवासी शब्द के उच्चारण से ही आदिवासियों का यथार्थ हमारे सम्मुख खड़ा हो जाता है- सदियों से छला-सताया, नंगा किया और सोची-समझी साजिश के तहत वन-जंगलों की ओर भागने के लिए जबरन मजबूर किया जाता रहा एक असंगठित मनुष्य जाति का एक ऐसा समुदाय जो अपनी परम्परा सहित, सहस्त्र सालों से गाँवों-देहातों से दूर घने जंगलों में रहने वाला सन्दर्भहीन जीवन जीता है, जो प्रकृति से चिपटा हुआ एक विशेष पर्यावरण में अपने सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों को जान की कीमत पर संजोय, प्रकृतिनिष्ठ, प्रकृतिनिर्भर वातावरण में अपने पीठ पर आयुध लिए भोजन की तलाश में शिकारी बना मारा-मारा भटक रहा है। यह समुदाय वर्तमान में लाचार है, अन्यायग्रस्त है तथा पशुवत जीवन यापन करने वाला है। यही इसका कुल जीवन है तथा वेदना से भरा लोकाचार। आदिवासियों को जंगली जीवन जीने के लिए मजबूर कर सभ्यता से दूर रखने की साजिस भी की जाती रही है। तथा साथ ही साथ उनका शोषण और दोहन भी किया जाता रहा है। उन्हें न तो पनपने का मौका दिया जा रहा है न ही आत्मसात कर मुख्य धारा में शामिल होने दिया। उलटा इन पर असभ्य, जंगलीपन की पहचान थोपकर उनमे हीन-भावना भरी जाती है जिससे उन पर वर्चस्व कायम किया जा सके।

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh
A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly International E-Journal
ISSN-2993-4648 Year/Volume: 04, Issue: 14 | April - June 2026 | Impact Factor: 4.5 Page –28-31

आदिवासियों को आज खतरा है- उनके अस्तित्व खो जाने का, उनकी पहचान मिट जाने का। इनके पहचान मिटाने की साजिस बड़ी योजनाबद्ध तरीके से रची जा रही है। हिंदवादी व्यवस्थाओं द्वारा उन पर झूठ थोपा जा रहा है कि वह हिन्द हैं तथा 'घरवापसी' आयोजन के बाद उन्हें हिन्दू की जातिओं में विभाजित समाज में सबसे निचले दर्जे पर दाखिल किया जा रहा है- सेवकों की जाति में। इस समय आदिवासी समाज के प्रबुद्धजनों, सक्षम वर्गों तथा साहित्यकारों से जरुरत है कि वह आदिवासियों को एकीकृत करके संस्कृति को सुरक्षित रखें। "आदिवासी दर्शन मानव केन्द्रित नहीं है। वह मान कर चलता है कि इंसान की धरती पर उतनी ही हैसियत है जितनी कि घास के पौधे की पत्ते की या चींटी की"[2] प्राचीन मानव यह समझता था कि इंसान, प्राणीजगत और वनस्पति के बीच सामंजस्य की आवश्यता है, वनस्पति और जीवजगत के साथ 'हर्मोनियस रिलेशनशिप' की आवश्यकता है। आदिवासियों की संस्कृति में यह परंपरा से चली आ रही है और उनके दर्शन का हिस्सा बन गया है। आदिवासियों के दर्शन में समताबोध है न कि श्रेष्ठताबोध। प्राचीन संस्कृति में वनस्पतियों की पूजा, औषधीय पौधों की पूजा होती थी, आदिवासियों की संस्कृति में भी तभी से यह विद्यमान है। इनका दर्शन ही इस संस्कृति को जीवित रखे हुआ है। आदिवासियों के चिंतन दर्शन में स्वर्ग नरक की अवधारणा नही होती है। उनके दर्शन के अनुसार केवल पंचभूत से बनी देह मृत्यु के बाद उन्ही में मिल जाती है लेकिन चेतना या छाया नहीं। इनके यहाँ छाया को घर के कोने में कुलदेवता के स्थान पर निवास करने के लिए आमंत्रण दिया जाता है, पूर्वज देवता के रूप में इनकी पूजा भी की जाती है। इनके दर्शन में है कि प्रकृति से उतना ही लेना जितनी आवश्यकता हो तथा आगे आने वाली पीढ़ी के लिए एक सुन्दर संसार उपलब्ध हो सके। आदिवासियों के साहित्य का उद्देश्य 'सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम्' है, यह सत्य उनके जीवन में भी है और साहित्य में भी। आदिवासियों के साहित्यिक संसार में वर्त्तमान जीवन में आ रही आर्थिक कठिनाईयां हैं तथा जो राजनीतिक विध्वंस आया है, उन सारी बातों का चित्रण है। लेखन में आदिवासी प्रतिरोध भी है और 'आदिवासीपन' भी बरक़रार है। आदिवासियों का साहित्य जंगल से जुड़ा होता है तथा यह अपना प्रतिमान भी जंगलों में ही ढूढ़ता है। आदिवासी जीवन की तुलना 'गूलर के फूल' से की जाती है क्योंकि इसी की तरह आदिवासियों को जीवन भी खुली आँखों से दिखाई नहीं देता। आदिवासी कविता और कहानियों में महुआ के फूल का प्रतीकात्मक चित्रण होता है। "महुआ आदिवासियों के जीवन में जिस तरह से आजीविका का आधार रहा है, सौन्दर्य और अभिव्यक्ति का आधार व प्रतीक रहा है, उसे अभी बाहर के साहित्य के लोग नहीं समझ पाये हैं।"[3]

झारखण्ड के मुण्डा जनजातियों को केंद्र में रखकर लिखा गया उपन्यास 'गायब होता देश', रणेन्द्र का दूसरा उपन्यास है। यह उपन्यास 2014 में प्रकाशित हुआ है। यह उपन्यास 51 भागों में विभक्त है तथा इस उपन्यास का प्रारंभ पत्रकार किशन विद्रोही की हत्या से होता है। किशन की हत्या एक रहस्य है, जिसकी गुत्थी सुलझाने के लिए एक अन्य पत्रकार (सूत्रधार) निकल पड़ता है। किशन विद्रोही की हत्या के की खोजबीन करते हुए सूत्रधार कई कहानियों से रूबरू होते हैं तथा उपन्यास का कथानक खुलता जाता है। कई कहानियाँ सामने आती हैं तथा कई सारे अनसुलझे रहस्य भी खुलते हैं। किशन की एक डायरी के माध्यम से उपन्यास में पूर्वदीप्त शैली में भी कथानक चलता है। इस उपन्यास में पूँजीवादी ताकतों का निर्मम स्वरूप भी दिखाया गया है। "पूँजीवादी दौड़ में शामिल लोग किस तरह घास की तरह मानव समुदाय को चरते जा रहे हैं, उसी पीड़ा का दर्शन 'गायब होता देश' में होता है"[4]। यह रहस्य भी खुलता जाता है कि किशन की हत्या के पीछे कोई एक नहीं, अनेक देशी और विदेशी, स्थानीय और भूमंडलीय, आर्थिक और राजनीतिक, निजी और सरकारी, दमनकारी और शमनकारी शक्तियां मौजूद है। रहस्य और रोमांच के साथ-साथ उपन्यास में किशन विद्रोही और अनुजा पाहन के व्यक्त-अव्यक्त प्रेम तथा पत्रकारिता के पतन की कहानी भी गुंथी हुई है। इस प्रेमाख्यान के सहारे मुण्डा समाज के जीवन- संघर्ष की कथा आज के कठिन कठोर भूमंडलीकरण यथार्थ का उदघाटन सरस और रोचक बना रहता है।

मैत्रेयी पुष्पा इस उपन्यास को 'आदिवासियों के बड़े फलक का आख्यान' बताते हुए लिखती हैं कि "औकात बढ़ी, पंख मिले, आकाश मिला लेकिन काले नालों के दरवाजे नहीं हुआ करते, लौटने के द्वार नहीं मिले इसी किशन विद्रोही की हत्या की खोज खबर से इस उपन्यास की शुरुआत होती है, जो व्यक्ति की अच्छाइयों-बुराइयों, प्रेम-घृणा, और लड़ाई के मोचर्चों पर हार जीत के साथ आगे बढ़ती है।"[5] इसी पर वह आगे कहती हैं कि "यह कथा आधुनिक विकास की तमीज के हिसाब से रातों-रात गुम हो जाती वस्तियों के बासिंदों की दर्दनाक दास्तान कहती है, जिन पर कागजी खजाना तो बरसाया गया लेकिन पाँव तले जमीन छीन ली।"[6] रणेन्द्र 'गायब होता देश' में आदिवासियों की तमाम संघर्षों- समस्याओं को कह पाने में सफल हुए हैं। रातो-रात किस प्रकार मुंडाओं की बस्तियां अचानक गायब हो जाती है, तथा मुंडाओं की मकदम टोली देखते-देखते दो-तीन सैलून में 'एश्वर्य विहार' कालोनी में तब्दील हो जाती है। प्रो. दिलीप मेहरा 'गायब होता देश' को उनके पूर्ववर्ती उपन्यास 'ग्लोबल गाँव के देवता' का ही अगला चरण मानते हुए अपने एक लेख में लिखते हैं "ग्लोबल गाँव के देवता' की अगली कड़ी 'गायब होता देश' कहा जा सकता है, कारण 'ग्लोबल गाँव के देवता' उपन्यास में सरकारी तंत्र की पूरी जाल हर जगह नहीं फैल सकी थी। परन्तु 'गायब होता देश' में पूरी तरह हर जगह जाल फैल चुकी है। आदिवासी आज हर क्षेत्र में गिरफ्त में आ चुके हैं।"7 इस उपन्यास में मुंडा आदिवासी ही नही पूरे अनपढ़ गरीब आदिवासियों को नक़्शे से गायब कर देने की मुहिम को चित्रित किया है। आदिवासियों की जल, जंगल, जमीन पर कब्जा करने की राजनीतिक षड्यंत्र को भी बारीकी से दिखाया गया है। सरकारें विकास के नाम पर आदिवासियों के समाज तथा संस्कृति का विनाश कर रही हैं। पूँजीवादी ताकतें आदिवासियों को विस्थापित कर उन्हें उजाड़ रहे हैं जंगलों और नदियों को प्रदूषित कर उन्हें नर्क में धकेलने का कार्य कर रहे हैं। मुण्डा आदिवासियों के विस्थापन की ओर संकेत करते हुए रणेन्द्र लिखते हैं - "दुलमी बाँध परियोजनाओं से उजड़ कर आदिवासी मदूकम जैसी बस्ती में आ बसे। दस-बारह साल पहले कोई बिल्डर डेवेलपर के कारण वहाँ से भी उजड़ना पड़ा। अब बिरसाडीह भी उजाड़ने की तैयारी चल रही है। यानी नही थके पंखों पर स्याही की तीसरी बूंद यदि आप हार गए तो मरी मक्खी की तरह कचरा पेटी में फेक दिए जाएंगे।"8 इस उद्धरण के माध्यम से रणेन्द्र के उपन्यास में छिपे आदिवासी चेतना तथा जागरूकता को भी व्यक्त होते देखा जा सकता है। उपन्यास 'गायब होता देश' में मीडिया पर करारा व्यंग भी किया गया है। आज जब मीडिया लोकतंत्र के चौथे स्तम्भ के रूप में देखी जाती है, वहीं

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh
A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly International E-Journal
ISSN-2993-4648 Year/Volume: 04, Issue: 14 | April - June 2026 | Impact Factor: 4.5 Page –28-31

मीडिया आज अमीरों और पूँजीपतियों के इशारों पर चल रही है। मीडिया के सभी चैनल झूठ परोसने तथा झूठे सपने दिखाने में व्यस्त हैं।उपन्यास 'गायब होता देश' में किशनपुर एक्सप्रेस, टोटल, चेंज, और प्लस चैनल के माध्यम से मीडिया के पूँजीवादी चरित्र को दिखाया गया है। मीडिया आदिवासियों के विनाश में सहायक सिद्ध होते औजारों को विकास के संसाधनों में तब्दील करने का भरपूर प्रयास करती है, सफल भी होती है। जिस निकाय का काम सत्य को प्रकट करना, षड्यंत्रों को सामने लाना है वही उनका कठपुतली बना हुआ है। इन चैनलों में सत्तावार के कामों को सराहनीय बताकर, शोषणकारी नीतियों और परियोजनाओं को सही बताकर शोषणकारी ताकतों को मजबूत किया जा रहा है। आदिवासी अब इतना जागरूक तो हो गया है कि अपने प्रश्न वह स्वयं पूछ सकता है। आदिवासी विकास के वासिंदों से पूछते हैं कि "अगर लुटियन दिल्ली के नीचे कोयला निकल आए, इलाहाबाद सिविल लाइंस के नीचे बाक्साईट, यूरेनियम चंडीगढ़ के नीचे, और आयरन लखनऊ, चेन्नई, बेंगलुरु के नीचे तो उजाड़ेगा लोग उसे? नहीं, कभी नहीं ऐसा कभी नहीं होगा क्योंकि वहाँ के रहने वाले एलीट सम्मानीय नागरिक हैं। भारत माता के अपने ब्रास बेटे।"9 सोमेश्वर मुण्डा के इन शब्दों से उभरती मर्मान्तक चीख को सुनकर यह जाना जा सकता है कि मुंडाओं के सोने जैसे देश का गायब होने का दर्द क्या है। आधुनिकता के तथाकथित विकास के कारण मुंडाओं के कई गाँव विलुप्त हो रहे हैं। आधुनिक सभ्य समाज समाज का विकास हो रहा है लेकिन आदिम जनजातियाँ विलुप्त हो रही हैं। शहरों का विकास-विस्तार तथा नगरीकरण गावों की बलि पर हो रहा है, कृषि की बलि पर हो रहां है, जंगलों, नदियों और पहाड़ों की बलि पर हो रहा है, प्राकृतिक सम्पदा नष्ट होती जा रही हैं, इससे विस्थापन की समस्याएं बढ़ी हैं, आदिवासी समुदायों में बेरोजगारी तथा गरीबी की समस्याएं बढ़ी हैं।

रेल मार्गों का विस्तार, एक्सप्रेस हाईवे मार्ग, खनिज संसाधनों की खुदाई, बाँध का निर्माण, औद्योगिक स्थापना आदि तमाम विकासलक्षी कार्यों की आड़ में आदिवासियों की उपजाऊ जमीनों को हड़प लिया जा रहा है, आदिवासी विस्थापित होने पर मजबूर हैं, जंगलों की कटाई को रोक पाने में असमर्थ हैं, नदियों को दूषित होते तथा वन्यजीवों को तड़प कर मरते देखने को विवश हैं। इन्ही के साथ नष्ट हो रही है इनकी संस्कृति, इनका परिवार, इनका अस्तित्व और इनकी अस्मिता। इस उपन्यास में उत्तर आधुनिकता की विचारधारा भी स्पष्ट रूप से नज़र आता है। 'गायब होता देश' में आदिवासियों के सरना शर्म और मेंगोलिथों प्रसंग की भी गहराई से चर्चा हुई है इससे मुंडाओं के विस्तृत जीवन का दर्शन होता है। गायब होता देश को वर्तमान समय का एक बेहद जरूरी उपन्यास बताते हुए 'प्रणय कृष्ण लिखते हैं - "देखते-देखते 'विकास' की यह जादुई चादर एक लबादे में बदल गयी जिसे सिर्फ एक आदमी ने पहन लिया। पूँजी के सभी जादूगर एक ही काया में समा गए। इस विकास के तिलिस्म को तोड़ना, कारपोरेट जादूगरी को औपन्यासिक जादू से काटता यह उपन्यास हमारे समय की जरूरत है। पूँजी-प्रतिष्ठान ने देश, समय और समाज का जैसा आख्यान रचा है, 'गायब होता देश' उपन्यास उसका प्रति-आख्यान है, मूल्य, विचार, ज्ञानशास्त्र, अनुभव व भाव सम्पदा, संस्कृति और राजनीति, हर स्तर पर।"[10] आधुनिकता के होड़ में आदिवासियों का ये दिसुम गायब होता जा रहा है, सरना- वनस्पति जगत, मरांग-बुरु-बोंगा, पहाड़ देवता आदिवासियों के गीत-नृत्य, धीमे बहने वाली, स्वर्ण चमक बिखेरने वाली, शीतलता धारण करती नदियाँ जिसमे इकिरबोंगा जल देवता का निवास था -सब गायब होता जा रहा है। उपन्यास के शीर्षक के अस्तित्व की चर्चा करते हुए प्रणय कृष्ण लिखते हैं- "उपन्यास के शीर्षक और उसके आखिरी घटना-सत्य में एक ज़बरदस्त द्वन्द्व है। शीर्षक में जो 'गायब होता देश' है, उपन्यास का अंत होते-होते, वही अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए लड़ता हुआ, बल्कि छोटी-छोटी ही सही, जीत हासिल करता हुआ देश है। संभव है कि आज उसका 'गायब होते जाना' प्रबलतर सच्चाई हो, लेकिन उसका लड़ते हुए आगे बढ़ना भी एक सच है जिसे संगठित होते जाना है।"11 'गायब होता देश' में रणेन्द्र ने आदिवासियों के ऐतिहासिक-सांस्कृतिक पक्षों का भी रेखांकन किया है। आदिवासी मिथकों का भी सहारा लिया गया है। उपन्यास के पात्र सोमेश्वर मुण्डा के कथनों से रणेन्द्र स्पष्ट करते हैं "लेकिन इतना तो तय है कि लेमुरिया समुद्र में प्रकट हुआ, पुनः समुद्र में डूब गया, लेकिन नए युग के उदय के साथ वह पुनः प्रकट होगा"12 इसके माध्यम से रणेन्द्र दिखाना चाहते हैं कि आदिवासियों को अपने देश से कितना प्यार है। वह अपने मातृभूमि को 'सोने जैसा देश' कहते हैं, वहीं उनका उनके मिट्टी से दूर होते चले जाने की वेदना 'गायब होता देश' के रूप में रुदन करती है।

संजय कुंदन ने 'गायब होता देश' को मुंडाओं के जीवन उपन्यास न मानते हुए सिर्फ 'नव साम्राज्यवादी लूट के खिलाफ संघर्ष का एक दस्तावेज' मात्र कहा है। हालाँकि इन्होने रणेन्द्र की भाषा को अद्भुत आत्मीय कहा है। इसके विपरीत अनुज लुगुन जो आदिवासी साहित्य जगत के प्रसिद्ध लेखक हैं, ने 'गायब होता देश' को 'संकट संघर्ष और आधुनिकता' का उपन्यास कह कर आदिवासी जगत के लिए महत्वपूर्ण उपन्यास माना है। आदिवासियों को जंगली जीवन जीने के लिए मजबूर कर सभ्यता से दूर रखने की साजिस भी लम्बे समय से की जाती रही है। साथ ही साथ उनका शोषण और दोहन भी किया जाता रहा है। उन्हें न तो पनपने का मौका दिया है न ही आत्मसात कर मुख्यधारा में शामिल होने दिया है। उल्टा इन पर असभ्य, जंगलीपन की पहचान थोपकर इनमे हीन-भावना भरी जाती है, जिससे इन पर वर्चस्व कायम किया जा सके। आदिवासियों की वर्त्तमान समस्या उनके अस्मिता और आत्मसम्मान से जुड़ा है और इनके इस संघर्ष के बीच इनका आस्तित्व मिट जाने का। इनके पहचान मिटाने की साजिस बड़ी योजना बद्ध तरीके से रची जा रही है। प्राचीन काल में हिन्द धर्मशास्त्रियों के द्वारा इनका चित्रण, जहाँ दानव या राक्षसों के रूप में किया गया था वहीं वर्तमान के हिन्द धर्मप्रचारक इन्हें हिन्द धर्म में वापस लाने के लिए 'घर वापसी' अभियान चला रहे हैं। आदिवासी समुदाय इस बात के लिए भी संघर्ष कर रहा है कि वह मनुष्य ही हैं लेकिन हिन्दू नहीं हैं। इनका अलग धर्म है, संस्कृति, रीति-रिवाज, परंपरा सब कुछ हिन्दुओं से भिन्न है। इस समय आदिवासी समाज के प्रबुद्धजनों, सक्षम वर्गों तथा साहित्यकारों से अपेक्षा है कि वह आदिवासियों को एकीकृत करके संस्कृति को सुरक्षित रखें।

आदिवासी जीवन पर केन्द्रित रणेन्द्र के उपन्यासों में आदिवासी जीवन की सच्चाईयों को गहराई से व्यक्त किया गया है। आदिवासियों के बीच सूत्रधार की भूमिका में रहकर रणेन्द्र ने उनके संस्कृति का बखान किया है, समस्याओं से संघर्ष करते युवाओं का चित्रण है, विस्थापन का दर्द तथा विरोध करने के साहसी प्रवृत्तियों को भी व्यक्त किया गया है। 'गायब होता देश, में मुंडा आदिवासियों

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh
A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly International E-Journal
ISSN-2993-4648 Year/Volume: 04, Issue: 14 | April - June 2026 | Impact Factor: 4.5 Page –28-31

की अपनी मिट्टी से लगाव को मार्मिकता से चित्रण किया गया है। आदिवासियों का संघर्ष यहाँ भी दिखाई देता है। रणेन्द्र ने अपने दोनों उपन्यासों में ही आदिवासियों के मिटती हुई अस्मिता, गायब होते अस्तित्व को उजागर किया है, उनके पीछे के छिपे स्वार्थों का भी पर्दाफास किया है। इस उपन्यास में न सिर्फ आदिवासी जीवन का संघर्ष है, बल्कि आदिवासी जीवन दर्शन के अनुकूल आदिवासी चेतना तथा वैचारिकी का भी गहरा समावेश है। रणेन्द्र के उपन्यास समकालीन विमर्श साहित्य के क्षेत्र में एक नए दृष्टिकोण के साथ सामने आते हैं। रणेन्द्र के साहित्य में जो दर्शन झलकता है वह अन्य आदिवासी लेखकों से कुछ भिन्न या यूँ कहें कि कुछ बेहतर है। जाहिर है कि रणेन्द्र का सौन्दर्यबोध आदिवासी पृष्ठभूमि से ही आया है और यह पाठकों को इस तरह से जोड़ता है कि वह इस भ्रम में पड़ सकते हैं कि रणेन्द्र ने स्वयं उस त्रासदी को झेला है। आंशिक रूप से वास्तविकता भी यही है, रणेन्द्र आदिवासियों के जितने करीब रहे हैं उन्होंने उन्हें महसूस किया है, उनके सुख-दुःख में सहभागी बने हैं। रणेन्द्र का अनुभव परिपक्व है तथा इनका उपन्यास सुगठित, सुव्यवस्थित तथा यथार्थपरक है। उपन्यास में आदिवासी जीवन का रहन-सहन, तीज-त्यौहार, संस्कृति-समाज, धार्मिक आयोजन, मान्यताएं आदि भी समेकित की गई है।

****

संदर्भ-

1. प्रो. वी. कृष्ण तथा डॉ. भीम सिंह, आदिवासी विमर्श, नई दिल्ली, स्वराज प्रकाशन, 2014, पृष्ठ 26
2. रणेन्द्र, आदिवासी समाजः संकृति, इतिहास और दर्शन, डॉ. नवीन नन्दवानाः आदिवासी जीवन और हिंदी उपन्यास, समवेत, जनवरी-जून 2023, पृष्ठ 13
3. रोज केरकेट्टा, आदिवासी जीवन दर्शन और साहित्य, बन्दना टेटेः आदिवासी दर्शन और साहित्य, नई दिल्ली, विकल्प प्रकाशन, 2015, पृष्ठ 58
4. प्रो. मेहरा दिलीप, हिंदी उपन्यामों में आदिवासी अस्मिता का स्वर, डॉ. नवीन नन्दवाना आदिवासी जीवन और हिन्दी उपन्यास, उदयपुर (राजस्थान), समवेत, जन-जून 2023, पृष्ठ 32
5. मैत्रेयी पुष्पा, 'गायब होता देश' आदिवासियों के बड़े फलक का आख्यान, विश्वकर्मा विनोद. रणेन्द्र के उपन्यासों में आदिवासी विमर्श, ठाणे (महाराष्ट्र)-401303, प्रलेक प्रकाशन, 2023, पृष्ठ 181
6. मैत्रेयी पुष्पा, 'गायब होता देश' आदिवासियों के बड़े फलक का आख्यान, विश्वकर्मा विनोद, रणेन्द्र के उपन्यासों में आदिवासी विमर्श, ठाणे (महाराष्ट्र)-401303, प्रलेक प्रकाशन, 2023, पृष्ठ 181
7. प्रो. मेहरा दिलीप, हिंदी उपन्यासों में आदिवासी अस्मिता का स्वर, डॉ. नवीन नन्दवाना, आदिवासी जीवन और हिन्दी उपन्यास, उदयपुर (राजस्थान), समवेत, जन. जून 2023, पृष्ठ 32
8. रणेन्द्र, गायब होता देश, नई दिल्ली, पेंग्विन प्रकाशन, 2014, पृष्ठ 217
9. रणेन्द्र, गायब होता देश, नई दिल्ली, पेंग्विन प्रकाशन, 2014, पृष्ठ 215
10. प्रणय कृष्ण, हमारे समय का एक बेहद जरूरी उपन्यासः गायब होता देश, डॉ. नवीन नन्दवाना, आदिवासी जीवन और हिन्दी उपन्यास, उदयपुर (राजस्थान), समवेत, जन. जून 2023, पृष्ठ 183
11. प्रणय कृष्ण, हमारे समय का एक बेहद जरूरी उपन्यासः गायब होता देश, डॉ. नवीन नन्दवाना, आदिवासी जीवन और हिन्दी उपन्यास, उदयपुर (राजस्थान), समवेत, जन. जून 2023, पृष्ठ 184
12. रणेन्द्र, गायब होता देन, नई दिल्ली, पेंग्विन प्रकाशन, 2014, पृष्ठ 131